NJESR/June-2023/Volume-5/Issue-6 E-ISSN-2582-5836

DOI-10.53571/NJESR.2023.5.6.53-58

नवगीतकार डॉ. शंभुनाथ सिंह के काव्य का विवेचन एवं विश्लेषण

संगीता झगटा

सह-आचार्या, हिंदी विभाग

राजकीय कन्या महाविद्यालय, शिमला – 01

E-mail : sangeetajhagta0@gmail.com

(Received:15May2023/Revised:29May2023/Accepted:15June2023/Published:28June2023)

नवगीत सामान्य परिचय :-

नवगीत से तात्पर्य है जो थोड़े समय से बना चला या अविष्कृत हुआ हो। जो पुराना न हो, जो वर्तमान काल में या उसके बहुत निकट बना नवीन या नूतन कहलाता है। नवगीत से अभिप्राय उस कविता से है जो गीतों के माध्यम से अभिव्यक्त हुई है। नई कविता की तरह गीतकारों ने अपनी अलग पहचान बनाने के उद्देश्य से नवगीत का आंदोलन चलाया था। सामान्यतः ग्राम गीतों के टुकड़े-गाँव की भाषा, गीतों की लय आदि को पकड़ने के साथ आधुनिकता का रंग भरकर लिखी गई कविता को नवगीत कहा जाने लगा।

यह भी माना जाता है कि नई कविता ने जिस प्रकार या जिस सीमा तक अपनी पूर्ववर्ती काव्य परंपरा से अपने को अलगाकर, नए रूप विन्यास को अपनाया है। उस सीमा तक नवगीत अपनी पूर्ववर्ती काव्य परंपरा से स्वयं को अलगा नहीं सका है। अतः प्रयास करने पर भी इसका स्वर आधुनिक नहीं बन पाया है। यह प्रेम और प्रकृति के दो छोरों तक सीमित रहकर स्थगित हो गया है।

नवगीत नाम की सार्थकता :-

सियारामशरण प्रसाद गुप्त ने गीत के इस नए स्वर को 'आज का गीत' कहा तो बालस्वरूप राही और शलभ सिंह ने इसे 'नया गीत' कहना पसंद किया। गंगा प्रसाद ठाकुर और ओंकार ठाकुर इसे 'आधुनिक गीत' की संज्ञा से अलंकृत करते हैं तो रामदरश मिश्र ने सियारामशरण की ही भाषा में इसे 'आज का गीत' कहना अधिक पसंद किया है, लेकिन उन्होंने जब इस विषय पर निबंध लिखा तो 'आज का गीत' उनकी कलम से 'नए गीत' के रूप में अंतर्निहित हो गया। अंत में राजेंद्र प्रसाद सिंद द्वारा इस गीत विधा को एक नया शीर्षक मिला – 'नवगीत'।

अपनी 'गीतांगिनी' के संपादकीय में राजेंद्र प्रसाद सिंह ने न केवल इस शब्द का प्रयोग किया बल्कि अपने सहयोगियों के समन्वित प्रयास से नवगीत आधुनिकता का संदर्भ, बिंब और उसकी तात्विकता के आधार पर विवेचन-विश्लेषण भी किया। अन्ततः अपनी संक्षिप्ता और अभिनवता के कारण 'नवगीत' प्रचलित हो गया और सन् 1960 के बाद लिखे जाने वाले गीतों को 'नवगीत' की संज्ञा दी जाने लगी।

'नवगीत' शब्द का प्रयोग चाहे आधुनिकता की चुनौती के रूप में हो या 'व्यतीत भावबोध तथा वासी शिल्प शैली' से विभिन्नता प्रकट करने के लिए हो अथवा नई कविता, नई कहानी, नई आलोचना के समकक्ष। इस 'नव' शब्द को व्यवहृत किया गया हो अथवा गीत की प्रतिष्ठा की पुनर्स्थापना के रूप में, किंतु इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि आज की उलझी हुई

परिस्थितियों में, इतिहास की सीमाओं और भाषा की असमर्थता को देखते हुए समकालीन साहित्य में नए बोध, नए विचारों, नई संवेदनाओं की विशिष्टताओं को प्रतिष्ठित करने के लिए 'नव', 'नया', 'नई' जैसे संबोधन सुविधाजनक होने के साथ-साथ युग सापेक्ष्य भी हैं। अतः इस 'युग-सापेक्ष्यता', 'नूतन-भावबोध' और 'बौद्धिक चिंतन' को देखते हुए उसे 'नवगीत' की संज्ञा देना उचित ही था। युगानुरूप नई चेतना एवं स्फूर्ति के आधार पर भी 'नवगीत' अभिधान ही सर्वाधिक ग्राह्य माना जा सकता है।

नवगीतों की परंपरा :-

गीतों की परंपरा नई नहीं है या यों कहना चाहिए कि हिंदी काव्य परंपरा का प्रवर्तन ही गीतों से हुआ है। कवि के हृदय में राग की अनुभूतियाँ सदैव विद्यामन रहती हैं जब भी उसका हृदय राग से उद्वेलित हुआ उसकी लेखनी ने शब्दों के माध्यम से उसे अभिव्यंजित किया। यही स्वरलहरी हिंदी साहित्य में गीतों के नाम से अभिहित हुई। यह गीत परंपरा समय के साथ बदलती रही, कभी भक्ति के रूप में, कभी राष्ट्रीय प्रेम के रूप में, तो कभी श्रृंगार के रूप में।

भारतीय संदर्भ में गीत परंपरा वैदिक युग से पाई जाती है। जयदेव और विद्यापति प्रारंभिक गीत कवि हैं। भक्ति कवियों में प्रायः प्रत्येक ने पदों की रचना की। पुनर्जागरण काल में भारतेंदु के गीतों में लोकतत्व का नया सम्मिश्रण मिलने लगता है। स्वच्छंदतावाद काल में प्रसाद, निराल, पंत, महादेवी ने गीतों की प्रचुर रचना की तथा परंपरा को आगे बढ़ाया। समय और परिस्थिति के अनुसार गीतों की रचना सदा होती रही है, किंतु नवगीत प्राचीन गीतों से अपने विशिष्ट पार्थक्य को प्रकट करते हुए भी उससे जुड़ना चाहता है। यथार्थ की कटुवाहट और कल्पानाओं का सलोनापन आज नवगीत के रूप में प्रकट हुआ है। अंतर केवल इतना है कि पहले के गीतों को केवल गीत कहा गया और आज नवगीत कहने का आग्रह विद्यमान है। नवगीत की चेतना यद्यपि निराला के काव्य में अभिव्यक्त हुई थी परंतु प्रयोगवाद के प्रवर्तक अज्ञेय द्वारा गीत को 'गतानुगतिक स्वना' कह देने से गीतकारों ने गीत लिखना लगभग छोड़ दिया था। इन्हें ऐसा लगा कि कवि का कर्म केवल कविता करना है और अगर कविता के इतर 'गीति' की सर्जना की तो कवि निकृष्ट श्रेणी में परगणित होने लगेंगे। ऐसी स्थिति में गीत की दशा बड़ी शोचनीय थी। इस समय गीत को अत्याधिक सामर्थ्य और सशक्तता की आवश्यकता थी, जिससे वह खोयी हुई प्रतिष्ठा को पुनः प्राप्त कर सके।

प्रयोगवाद में गिरिजाकुमार माथुर, केदारनाथ सिंह जैसे सशक्त गीतकारों के सत् प्रयत्नों से निर्जीव, निष्प्राण 'गीत' धारा में कुछ जान आई। इनके ही प्रयासों का परिणाम था कि गीत आलोचकों में पुनः चर्चा का विषय बना। सन् 1950 तक आते-आते इस चेतना को मुखरता मिल पाई। नवगीत को सर्वप्रथम चर्चा का विषय 1951-52 में माना गया। इस सन् में काशी में हुए साहित्यिक संघ के अधिवेशन में हिंदी के नए गीतों पर चर्चा हुई थी, जिसमें भारती, नरेश मेहता, जगदीश गुप्त, रामदरश मिश्र, शंभुनाथ सिंह, नामवर सिंह तथा अन्य कितने ही कवि उपस्थित हुए। इस संघर्ष का प्रारंभ 'वासंती' पत्रिका सन् 1960 के प्रकाशित होते ही हुआ। नवगीत नाम पर सर्वप्रथम लेख शंभुनाथ सिंह का था। नई कविता एवं नवगीत में एकरूपता स्थापित की गई थी। इसका समर्थन सर्वप्रथम रामदरश मिश्र और रमेश कुंतल मेघ ने किया था। 'गीत' पत्रिका 1964 में नई धारा के गीतकारों के आत्मवक्तव्य तथा आलोचकों की गीत संबंधी मान्यताओं को एक साथ प्रकाशित किया गया, किंतु हिंदी नवगीत को नई व निश्चित दिशा ठाकुर प्रसाद सिंह की 'वंशी और मादल' गीत शीर्षक संग्रह से मिली। आज के नवगीतों में स्वानुभूति की प्रधानता, संक्षिप्तता, गेयता की तीव्रता, राग की प्रमुखता और समूचे जीवन को अभिव्यक्त करने की नूतन प्रवृत्तियाँ उल्लेखनीय हैं।

नवगीत की स्थापना में वीरेंद्र मिश्र का महत्वपूर्ण योगदान है। उनके काव्य संग्रह 'अविराम चल मधुवंती' में तो अधिकांश गीत ही हैं। डॉ. शंभुनाथ सिंह एक स्थापित एवं सफल नवगीतकार हैं। उनके प्रतिनिधि नवगीतों का संकलन 'जहाँ दर्द नीला है' का उल्लेख गीत परंपरा में अपना विशेष महत्व रखता है। तीन दशकों में हिंदी काव्य एवं समीक्षा में साहित्यिक राजनीति के कारण पर्याप्त जटिलता, अस्पष्टता का आगमन हुआ है जिसके परिणामस्वरूप अन्य विधाओं एवं काव्यरूपों के साथ-साथ नवगीत के स्वरूप-वैशिष्ट्य के निरूपण में कठिनाई पैदा हुई है। डॉ. शंभुनाथ सिंह ने नवगीत की उपयुक्तता को प्रामाणित करते हुए लिखा है – "नवगीत स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद तीन दशकों में विकसित वह नवीन काव्यधारा है जो एक ओर तो पारंपरिक गीत धारा से नितांत भिन्न है,

दूसरी ओर सामयिक नई कविता से कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर पूरी तरह अलग हटी हुई है। मात्र गीत कहने से उसकी पहचान खो जाती है और नई कविता कहने से उसकी अस्मिता ही लुप्त हो जाती है अतः नवगीत ही उसका एकमात्र सार्थक नाम है।"

डॉ. शंभुनाथ सिंह ने नवगीत के स्वरूप को स्पष्ट किया तथा नवगीत बोधात्मक दृष्टि से और शिल्प की दृष्टि से भी पारंपरिक गीत तथा नई कविता से भिन्न स्वरूप लिए हुए हैं। गीत और नई कविता का सम्मिलित उतराधिकार क्योंकि उसे प्राप्त है। अतःएव वह इनसे सर्वथा अलग विधा भी नहीं है। नवगीत विधा विकसित होकर आज हिंदी कविता की प्रतिनिधि धारा बन गई है। नवगीत साहित्य ने भारतीय व विश्व चेतना को अपने भीतर समाहित कर लिया है।

डॉ. शंभुनाथ सिंह के काव्य में नवगीत का विषय :-

मानवता की भावना का विकास नवगीत में पूर्ण रूप से हुआ है। किसान, मज़दूर, विधवा आदि ही इनकी रचना के विषय हैं। इन गीतकारों ने वास्तविक परिस्थिति और पीड़ा का परिचय खुले शब्दों में किया है। कई नवगीतों में प्रेम का खुला चित्रण भी मिलता है जिसमें यौन कुंठा और वासना की पुकार है, परंतु इसमें तो उस प्रेम का चित्रण भी मिलता है जिसे सामान्य पाठक रात-दिन अनुभव करता और देखता है। इन्होंने प्रकृति व प्रणय को भी अपना विषय बनाया है। प्रणय इनके जीवन का अभिन्न अंग है, वह गतिशील रखने वाली प्रमुख शक्ति है। यही कारण है कि अपने काव्य में इन्होंने उनके प्रति न केवल गहरी आसक्ति ही प्रदर्शित की है, वरन् उनकी महता का प्रभावशाली शब्दों में प्रतिपादन भी किया है।

डॉ. शंभुनाथ सिंह में यदि रूपासक्ति और सौंदर्य पक्ष का प्राधान्य है तो नीरज तथा रामनाथ अवस्थी में व्यथा, वेदना, पीड़ा आदि के दर्शन होते हैं। आशा-निराशा, हर्ष-विषाद, क्षय तथा स्वास्थ्य सभी को अपने में समेटे इन कवियों की यह प्रणय भावना नवगीत कविता में महत्वपूर्ण बनी है। प्रकृति इनकी मनःस्थितियों के अनुरूप ही विविध परिधानों में विशिष्टित होकर उनके काव्य में उतरी है। मुख्यतः प्रणय तथा उसकी विविध अनुभूतियों को अधिक तीव्र करती है। डॉ. शंभुनाथ सिंह 'दिवालोक' में लिखते हैं –

"भर गया सजल घन से नभ का सूना आँगन,

सूने नयनों में उमड़ पड़े दो भरे नयन।"

ऐसे समय में प्रेयसी और भी समीप हो तो अनुभूतियाँ और भी सजग हो उठती हैं। सच पूछा जाए तो नवगीतकारों की रुचि प्रकृति के मानवीकरण की ओर सर्वाधिक रही है। अपनी प्रेयसी के रूप का अंकन करने के लिए इन्होंने प्रकृति का वर्णन भारी संख्या में किया है। नवगीत के कवि ग्रामीण जीवन से अधिक गहराई से जुड़े होने के कारण इन्होंने ग्रामीण प्रकृति के आकर्षक चित्र चित्रित किए हैं। राष्ट्रीय चेतना भी इनके काव्य का विषय रहा है। प्रकृति जैसे परंपरागत विषयों को ग्रहण करते हुए, इन्होंने उन्हीं में नूतन तथा पुरातन मान्यताओं का समावेश किया है। उपेक्षा व उदासीनता के शापों के बावजूद गीतकारों ने इस परंपरा को रोचक और अनिवार्य अंग के रूप में प्रतिष्ठित किया है तथा विषयों को नवीनता प्रदान की है।

डॉ. शंभुनाथ सिंह नवगीतकारों में प्रमुख हस्ताक्षर हैं इनका लेखन आधी शती की दीर्घ यात्रा तय कर चुका है। इन्होंने छायावादी अनुभूति के कुहासे को चीरकर मुक्त दृष्टि से जीवन को देखने-परखने का नवीन प्रयास किया है। नवगीत साहित्य में एक आलोचक एवं कवि के रूप में इनका प्रमुख स्थान है। इनके काव्य में युगबोध के प्रति सचेतना का भाव सदैव विद्यमान रहा है। इसीलिए वे बिंदु पर स्वयं में नए विकास को संभव बनाने के लिए प्रयत्नशील दृष्टिगत होते हैं। इसी का परिणाम है कि पांच दशकों तक हिंदी कविता की सभी प्रमुख भंगिमाओं से उनका संबंध रहा है। इनकी प्रारंभिक गीत कृतियों में छायावादी अवशेषों के साथ-साथ उत्तर छायावादी काव्य प्रवृत्तियों एवं प्रगतिशील गीत तत्वों की अभिव्यक्ति है। इसके पश्चात् इन्होंने आँचलिक तत्वों से संपन्न नवगीतों की स्थापना की। साथ ही वह लंबे समय तक नयी कविता से भी जुड़े रहे। नवगीतकार शंभुनाथ सिंह जी ने अपने गीतों के माध्यम से अत्यंत सुपरिचित जीवन-संघर्षों एवं समाज संबंधों को भी भाव-कल्पना की आंतरिक फुहारों से रसमय बना दिया है। वैयक्तिक प्रणय की अनुभूतियों की भावुक, कल्पनाशील और कुशल, चित्रकार साथ ही वैयक्तिक कला की सीमित भूमि से निकलकर प्रशस्त सामाजिक पथ पर अपने आगमन की सूचना देने वाले डॉ. शंभुनाथ सिंह को यदि नवगीत निर्माताओं में अग्रणी कहा जाए तो

अत्युक्ति नहीं होगी। अपने काव्य में इन्होंने युग की माँग के अनुरूप अपनी भाव-भूमि को व्यापक, प्रशस्त तथा युगानुरूप बनाया है। इनकी काव्य यात्रा का विकास इस प्रकार है – रूपरश्मि (1941), छायालोक (1945), उदयाचल (1946), मन्वंतर (1948), दिवालोक (1951), माध्यम मैं (1959), खंडित सेतु, समय की शिला पर (1968), जहाँ दर्द नीला है (1977)।

नवगीत की विकास यात्रा में डॉ. शंभुनाथ सिंह की भूमिका बहुमुखी है। इस यात्रा में इनकी सक्रियता के तीन आयाम रचना, आलोचना एवं संपादन हैं। नवगीत के उद्भव के साथ ही अच्छे आलोचक एवं संपादक का अभाव अनुभव होता रहा है। इस दिशा में डॉ. शंभुनाथ सिंह का विशिष्ट योगदान है। 'नवगीत दशक' का तीन खंडों में इन्होंने जो संपादन किया, वह महत्वपूर्ण है। एक आलोचक के रूप में डॉ. शंभुनाथ सिंह ने नवगीत पर बहुत अधिक नहीं लिखा है, परंतु जितना लिखा है – वह नवगीत के स्वरूप को स्पष्ट करने में सहायक है।

डॉ. शंभुनाथ सिंह रचना के स्तर पर 'नई कविता' से जुड़े रहे हैं। उनकी मान्यताओं पर नई कविता का प्रभाव भी है। इन्होंने नवगीत का स्वरूप स्पष्ट करते हुए कहा, "नवगीत न कभी काव्यान्दोलन था, न आज है, वह तो नई कविता का जुडवां भाई है।" उनकी धारणाओं का सार यह है कि नवगीत आधुनिकता बोध संपन्न जातीय संस्कारों का काव्य है, जिसका अभिव्यक्ति पक्ष बिंब-प्रधान है। 'समय की शिला पर' काव्य संग्रह में इन्हीं जातीय संस्कारों की अभिव्यक्ति हुई है। लोक मानस में गरही पैठ होने के कारण शंभुनाथ सिंह का काव्य – जातीय संस्कारों का काव्य है। शंभुनाथ के काव्य में जातीय संस्कारों की अभिव्यक्ति दो प्रकारों से हुई है – प्रकृति और संस्कृति। प्रकृति का आगामी विस्तार लोक चेतना, आँचलिकता और दृश्यात्मक प्रकृति में हुआ है तो संस्कृति की व्याप्ति सामाजिक संस्कारों, इतिहास संदर्भों, पुरा बिंबों एवं सामाजिक यथार्थ-सापेक्ष स्थितियों के चित्रण में इस प्रकार हुई है –

"तम की दीवार तोड़ कर

बन्ध दुर्निवार तोड़ कर

मुक्त ज्योति की उठे लहर।"

यह कवि के जातीय संस्कार ही हैं कि वह अंधकार की दीवार को तोड़ने के लिए तत्पर होकर सामाजिक रूढ़ियों को छोड़कर यथार्थ में विचरण करने की पुकार करता है।

डॉ. शंभुनाथ सिंह ने अपने काव्य संग्रह 'समय की शिला पर' में सामाजिक चित्रण एवं समकालीन यथार्थ-बोध आदि को अभिव्यक्ति दी है। सामाजिक चेतना में उन्होंने ग्रामीण परिवेश तथा सामाजिक विसंगतियों का चित्रण किया है। कवि ने लोक के सु:ख-दु:ख को अपने सु:ख-दु:ख से मिलाकर उसे उस भाषा एवं शिल्प में अभिव्यक्ति दी है, जो लोक चेतना के अधिक समीप है। इनके गीतों का विषय ग्राम-संदर्भों से जुड़ा होने के कारण ग्राम-युवती की सहज आकांक्षाओं एवं लोक-लाज का द्वंद्व कुछ-कुछ गीतों में बहुत सुंदर अभिव्यक्ति पा गया है। आभूषणों एवं अलंकरणों का लोक-संदर्भ इन गीतों को साँस्कृतिक चेतना से संपन्न करता है। कवि ने इस गीत में इसका संकेत इस प्रकार दिया है –

"रुनभुन्न बिछिया झींगुर वाली

किकिंन ज्यों वक-पांत है,

स्वयंवरा बन चला बावरी

क्या दिन है, क्या रात है।"

कवि सामाजिक अन्याय, विषमता को हटाकर ऐसे समाज का निर्माण करना चाहता है, जहाँ परस्पर सामंजस्य स्थापित हो सके, जहाँ वह अकेला न हो। कवि की आत्मा सुविधावादी प्रवृत्ति से समझौता नहीं कर पाई है, बल्कि जीवन संघर्ष को अपनाया है। आज के

ग्रामीण जीवन की नियति तो विकृतियों के अभिशाप को ढोना है। नगरों की मूल्यहीनता गाँव में फैल रही है। उसके विष से ग्रामीण जीवन में एक भयंकर साँस्कृतिक प्रदूषण महामारी की तरह फैल गया है।

नवगीतकारों में डॉ. शंभुनाथ सिंह का योगदान :-

डॉ. शंभुनाथ सिंह नवगीतकारों में प्रमुख हस्ताक्षर हैं। इनका गीत लेखन में अपना अनूठा स्थान है। शंभुनाथ सिंह सफल नवगीतकार हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र में इनके गीतों की संवेदना व शिल्प रूपों में विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। शंभुनाथ सिंह हिंदी साहित्य के एक महान् आलोचक व संपादक के रूप में भी दिखाई देते हैं। इन्होंने छायावादी अनुभूति को भी काव्य का विषय बनाया है। इनके नौ काव्य संग्रह हैं। इनकी काव्य-यात्रा प्रेम व प्रकृतिजन्य अनुभूतियों से आरंभ होती है और समापन यथार्थ के गहरे साक्षात्कार से होता है।

डॉ. शंभुनाथ सिंह जिंदगी को खुली नज़र से देखते हैं और युगीन हलचलों से प्रभावित होते हुए अपनी संवेदनाओं को ईमानदारी से पेश करते हैं। वे कविता की सच्चाई यथार्थ से मानते हैं। वे मध्यवर्गीय व्यक्ति की अनुभूतियों को इस प्रकार चित्रित करते हैं कि पाठक को मध्यवर्गीय विवशता, स्वार्थ, घुटन आदि के दर्शन होने लगते हैं। समाज के लिए अनुभव उनके गीतों में संवेदना के विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त हुए हैं।

डॉ. शंभुनाथ सिंह संवेदना और शिल्प को अलग नहीं मानते हैं, क्योंकि वस्तु तत्व स्वयं अपने अनुरूप शिल्प का अन्वेषण कर लेता है। दोनों तत्व घुले-मिले हैं। शिल्प की दृष्टि से कई पंक्तियाँ मन को अपनी ओर खींच लेती हैं तथा अपने अर्थ की सार्थकता प्रस्तुत करती हैं। गीतों में गेयता, संक्षिप्तता, तीव्र भावों का संवेग और गहरी आत्मीयता इनके गीतों में हर जगह मिलती है। इनकी भाषा एवं छंदों में वे तत्व हैं जो नवगीत की विशिष्टताओं को रेखांकित करते हैं और हिंदी गीत की परिवर्तनशीलता का संकेत देते हैं।

डॉ. शंभुनाथ सिंह के गीतों में प्रयुक्त होने वाले बिंब संशलिष्ट अर्थों की अभिव्यक्ति में बहुत सफल रहे हैं। भाषा के संदर्भ में उनकी पूर्वोक्त मान्यता की अभिव्यक्ति इनके गीतों में हुई है। एक ओर वे सहज एवं बोलचाल की भाषा को गीत के लिए उपयुक्त मानते हैं, दूसरी ओर उनका आग्रह आँचलिक एवं लोकपरक शब्दावली की ओर रहा है। आधुनिक नागरिक जीवन की जटिलताओं को अभिव्यक्त करने के कारण भाषा के सामयिक मुहावरे को इन्होंने अपनाया है। इन्होंने मुख्यतः प्रतीकों का प्रयोग किया है, जिससे भाषा में इंद्रियग्राह्यता का गुण विशेष रूप से आ गया है। कवि के बिंब भी बड़े सार्थक, सजीव व प्रभावपूर्ण हैं। अतः कहा जा सकता है कि काव्य के शिल्प-विधान के अंतर्गत संवेदना संप्रेषण के लिए शिल्प के सभी अंगों का उचित प्रयोग हुआ है।

निष्कर्ष :-

समग्रतः कहा जा सकता है कि नवगीतकार के रूप में डॉ. शंभुनाथ सिंह की महत्वपूर्ण भूमिका का स्पष्ट परिचय इस संक्षिप्त विवेचन से ही चल जाता है। अपने समकालीन कवियों में जो बोधगत आधुनिकता एवं प्रगतिशील चेतना इनमें विद्यमान रही है, उसी के बल पर नवगीत धारा को वे अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सके हैं। अधिकांश नवगीतकार जहाँ आत्मस्थापना के प्रयास में ही संलग्न रहे, वहाँ डॉ. शंभुनाथ सिंह ने नवगीत की व्यापक स्वीकृति के लिए 'नवगीत दशक योजना' में गंभीर अस्वास्थ्य के बीच अपना अमूल्य श्रम लगाया है।

इनके काव्य संग्रह 'समय की शिला पर' में काव्यगत कथ्य स्वयं अपना रूपाकार लेकर अचेतन मन से सहसा उद्भूत होता रहा है। इन गीतों में जो कथ्य अभिव्यक्त हुआ है, वह केवल गीत के रूपाकार में ही सही ढंग से ढल सकता था। "इन गीतों में अनुभूति की कच्चाई और आसक्ति की अतिशयता देखी जा सकती है, किंतु इनमें वह तन्मयता भी मिलती है जो आत्मवेषण की पीड़ा के क्षणों में उपलब्ध होती हुई मन की परतों को बेधती चली जाती है।"

डॉ. शंभुनाथ सिंह के गीतों में हृदय की भावुकता का निर्बोध स्त्रोत फूटता है। अपनी कुशल गीति कथा का परिचय देते हुए इन्होंने अपनी स्मृद्ध बहुरंगी कल्पना का योग कर गीतों को और अधिक आकर्षक बना दिया है। इनके गीतों में संक्षिप्तता, भाव-

प्रवणता, अनुभूतिमयता एवं कल्पना की सहज रंगीनी ने इन्हें हिंदी के महत्वपूर्ण गीतकारों की पंक्ति में प्रतिष्ठित ही नहीं किया बल्कि प्रथम पंक्ति में आलेखित भी कर दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

लेखक	**पुस्तक**	**प्रकाशक**
डॉ. शंभुनाथ सिंह	समय की शिला पर	वाराणसी प्रकाशन, इलाहाबाद
स्नेहलता पाठक	आधुनिक हिंदी काव्य : उद्भव और विकास	विद्याविहार गाँधीनगर, कानपुर, पृ. 58-59
डॉ. सुरेश गौतम, वीणा गौतम	नवगीत इतिहास और उपलब्धि	शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 22
डॉ. राजेंद्र गौतम	हिंदी नवगीत : उद्भव और विकास	पराग प्रकाशन, दिल्ली – 32, पृ. 26
डॉ. शिवकुमार मिश्र	नया : हिंदी काव्य	अनुसंधान प्रकाशन, कानपुर, पृ. 298